**ओ३म्**

**‘फरूर्खाबाद में सनातनी पण्डितों के प्रश्न और महर्षि दयानन्द के उत्तर’**

**☼स्वामी दयानन्द द्वारा 1879 में सार्वजनिक रूप से पहली बार समलैगिंकता का विरोध☼**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

स्वामी दयानन्द 25 सितम्बर से 9 अक्तूबर, 1879 तक में आकर रहे और यहां वैदिक धर्म का प्रचार किया। फर्रूखाबाद में पौराणिक पण्डितों ने पं. गौरीशंकर के निवास पर एक धर्म सभा कर 25 प्रश्न लिखकर तैयार किये। उन प्रश्नों को सभा में सुनाकर स्वामी दयानन्द जी के पास समाधान हेतु भेजा गया। स्वामीजी के पूर्व निर्धारित कार्यक्रमों के कारण उस समय उन प्रश्नों को सुनने तक का समय स्वामी जी के पास नहीं था, परन्तु उन महानुभावों के आने से उनके प्रश्नों को सुनते ही उसी समय उनका उत्तर देना आरम्भ किया और उनसे समाधान लिख लेने को कहा, परन्तु वे न लिख सके। हां, 7 अक्तूबर सन् 1879 को बहुत से आर्य सभासदों ने सायं काल के समय उन प्रश्नों के उत्तर स्वामी से लिखवाये तथा सभी 25 प्रश्नों के उत्तर प्रश्नकर्त्ता पण्डितों के पास भेज दिये। यहाँ हम प्रथम 5 प्रश्नों व उनके उत्तरों को प्रस्तुत कर रहे हैं।

पण्डितों का प्रथम प्रश्न था--आप्तग्रन्थानुसार परिव्राजकों के धर्म क्या हैं? उनको यानादि का चढ़ना अथवा धूम्रपानदि अन्य व्यसन करना योग्य है वा अयोग्य? स्वामीजी द्वारा दिया गया उत्तर--वेदादि शास्त्रों में विद्वान होकर वेद और वेदानुकूल आप्तशास्त्रोक्त रीति, पक्षपात, लोकैषणा, निन्दा, स्तुति, मान-अपमान, परद्रोहादि दोषों से रहित हो, सुपरीक्षापूर्वक सत्यासत्य का निश्चय करके सर्वत्र भ्रमणपूर्वक सर्वथा सत्य ग्रहण, असत्य-परित्याग से सब मनुष्यों को शारीरिक आत्मिक और सामाजिक उन्नति के साधन, सत्यविद्या, सनातनधर्म सुपुरूषार्थयुक्त करके व्यवहारिक और पारमार्थिक सुखों से वर्तमान करके दुष्टाचारों से पृथक् कर देना परिव्राजकों का धर्म है। लाभ में हर्ष, अलाभ में शोकादि से रहित होके यानों पर बैठना तथा रोगादि निवारणार्थ औषाधियों का धूम्रपान करके परोपकार करने में यतियों को कुछ भी दोष नहीं, यह सब शास्त्रों में विधान है, परन्तु तुम्हें वर्तमान वेदादि सत्य शास्त्रों से विरोध होने के कारण भ्रम हैं, सो आप्त ग्रन्थों से (आपको) ऐसी विमुखता न होनी चाहिये।

दूसरा प्रश्न--यदि आपके मत में पापों की क्षमा नहीं होती तो मनु आदिक आप्तग्रन्थों में प्रायश्चित्तों का क्या फल है? वेदादि ग्रन्थों में परमेश्वर की क्षमाशीलता और दयालुता का वर्णन है, उससे क्या प्रयोजन है? यदि उसे आगुन्तक पापों की क्षमा से प्रयोजन है तो उसे क्षमा नहीं कहते और जब मनुष्य स्वतन्त्र होने से आगुन्तक पापों से बचा रहे तो उसमें परमेश्वर की क्षमाशीलता क्या काम आ सकती है? इस प्रश्न का महर्षि दयानन्द द्वारा दिया गया उत्तर--हमारा वेद प्रतिपादि मत के सिवाय कोई कपोल कल्पित मत नहीं है और वेदों में कहीं कृत (किये हुए) पापों की क्षमा नहीं लिखी और न कोई (विद्वान) युक्ति से भी विद्वानों के सामने (किये पापों की क्षमा) सिद्ध कर सकता है। क्या प्रायश्चित्त तुमने सुखभोग का नाम समझा है? जिस प्रकार जेलखाना आदि में चोरी आदि के पापों के फल का भोग होता है वैसे ही प्रायश्चित्त भी समझो। यहां क्षमा की कुछ भी कथा नहीं, क्या प्रायश्चित्त वहां पापों के दुःखरूप का भोग है? कदापि नहीं, परमेश्वर की क्षमा और दयालुता का यह प्रयोजन है कि बहुत से मूढ़ मनुष्य अज्ञानता से परमात्मा का अपमान और खण्डन करते और पुत्रादि के न होने या अकाल में मरते, अतिवृष्टि, रोग, पीड़ा और दरिद्रय के होने पर ईश्वर को गाली प्रदान भी करते हैं, तथापि परब्रह्म उन्हें सहन कर कृपालुता से रहित नहीं होता, यही उसके दयालु स्वभाव का प्रयोजन है। क्या कोई न्यायाधीश कृत पापों को क्षमा करने से अन्यायकारी और पापों के आचरण का बढ़ानेवाला नहीं होता? क्या परमेश्वर कभी अपने न्यायकारी स्वभाव से विरूद्ध अन्याय कर सकता है? हां, जैसे न्यायाध्यक्ष राजदण्ड और अप्रतिष्ठादि करके तथा विद्या और सुशिक्षा देकर पापियों को पाप से पृथक कर शुद्ध और सुखी कर देता है, उसी भांति परमेश्वर को भी जानो।

तीसरा प्रश्न सृष्टि का कारण परमाणुओं से सम्बन्धित है। प्रश्न--यदि आपके मत में तत्वादिकों के परमाणु नित्य हैं और कारण का गुण कार्य में रहता है तो परमाणु जो सूक्ष्म और नित्य है, उनसे सांसारिक स्थूल और अनित्य पदार्थ कैसे उत्पन्न हुए? इस उत्तर देते हुए महर्षि दयानन्द लिखते हैं कि जो परम अवधि **(maximum limit)** सूक्ष्मता की है, अर्थात् जिसके आगे स्थूल से सूक्ष्मता कभी नहीं हो सकती उसे परमाणु करते हैं, जिसके प्रकृति, अव्यकृति, अव्यक्त, कारण आदि नाम भी हैं और वह अनादि होने से नित्य हैं। जो कारण के गुण समवाय सम्बन्ध से कारण में हैं, वे नित्य हैं। क्या जो गुण कारणावस्था में नित्य हैं वे कार्यावस्था में भी नित्य हैं। क्या जो गुण कारणावस्था में हैं वे कार्यावस्था में वर्तमान होकर फिर जब कारणावस्था होती है तब भी (कारण के गुण) नित्य नहीं होते? और जब परमाणु मिलकर स्थूल होते हैं वा पृथक्-पृथक् होकर कारणरूप होते हैं तब भी उनके विभाग और संयोग होने का सामथ्र्य नित्य होने से अनित्य नहीं होते। वैसे ही गुरुत्व, लघुत्व होने का सामर्थ्य भी उनमें नित्य है, क्योंकि यह बात गुण-गुणी-समवाय सम्बन्ध से है।

चौथा प्रश्न मनुष्य, जीवात्मा और ईश्वर से सम्बिन्धित है। प्रश्न--मनुष्य और ईश्वर में क्या सम्बन्ध है? विद्या, ज्ञान से मनुष्य ईश्वर हो सकता है वा नहीं? जीवात्मा और परमात्मा में क्या सम्बन्ध है? और जीवात्मा और परमात्मा दोनों नित्य हैं और चेतन हैं तो जीवात्मा परमात्मा के अधीन हैं वा नहीं? यदि है तो क्यों? उत्तर--मनुष्य और ईश्वर का राजा-प्रजा, स्वामी-सेवक आदि का सम्बन्ध है। अल्प ज्ञान होने से जीव ईश्वर कभी नहीं हो सकता। जीव व परमात्मा में व्याप्य-व्यापक सम्बन्ध भी है। जीवात्मा सदा परमात्मा के अधीन रहता है, परन्तु कर्म करने में कभी नहीं, किन्तु पाप कर्मों के फल भोग में वह अनन्त सामर्थ्ययुक्त ईश्वर की व्यवस्था मे परतन्त्र है और जीव अल्प सामर्थ्यवाला है, इसलिए उसका परमेश्वर के अधीन होना आवश्यक है। इस चौथे प्रश्न व इसके उत्तर पर टिप्पणी करते हुए आर्य जगत के मूर्धन्य विद्वान प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु जी लिखते हैं कि लोगों ने अपनी अल्पज्ञता, दुर्बलता, स्वार्थ तथा साम्प्रदायिक सोच के कारण सरल, स्पष्ट सार्वभौमिक सिद्धान्तों का प्रकाश जन-जन तक पहुंचाने से रोका है। कर्मफल सिद्धान्त की दुहाई तो दी, परन्तु किये पाप कर्मों के फल से बचने तथा न किये कर्मों की सुख रूप प्राप्ति के लिए मन्नतों, कामनाओं की पूर्ति के लिए व्रत-उपवास आदि का प्रपंच रचाया। इसी प्रकार कहीं जीव को ब्रह्म बनाया और कभी ब्रह्म का अंश बताकर लोगों को भ्रमित किया। जीव न तो कभी परमात्मा था, न है और न कभी परमात्मा बन सकता है। यह ऋषि का आप्तवचन है।

अब पांचवां प्रश्न व उसका उत्तर प्रस्तुत है। प्रश्न--आप संसार की रचना और प्रलय को मानते हैं या नहीं? जब प्रथम सृष्टि हुई तो आदि सृष्टि में मनुष्य एक अथवा बहुत उत्पन्न हुए? जब उनमें कर्म आदि की कोई विभिन्नता न थी तब परमेश्वर ने कुछ मनुष्यों को वेदोपदेश क्यों दिया? ऐसा करने से परमेश्वर पर पक्षपात का दोष आता है। उत्तर--संसार की रचना और प्रलय को हम मानते हैं। सृष्टि प्रवाह से अनादि है, सादि नहीं। क्योंकि ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव अनादि और अव्याहत (बिना रोक-टोक के) हैं। जो ऐसा नहीं मानते उनसे पूछना चाहिए कि क्या प्रथम ईश्वर निकम्मा और उसके गुण, कर्म, स्वभाव भी निकम्मे थे। जैसे परमेश्वर अनादि है वैसे जगत् का कारण अनादि और जीव भी अनादि हैं, क्योंकि बिना किसी वस्तु के किसी कार्य का होना सम्भव नहीं, जैसे इस कल्प की सृष्टि के आदि में बहुत स्त्री-पुरूष उत्पन्न हुए थे, वैसे ही पूर्व के कल्पान्त सृष्टि में उत्पन्न हुए और आगे की कल्पान्त सृष्टियों में भी उत्पन्न होंगे, कर्म आदिक भी जीवों के अनादि हैं। चार मनुष्यों के आत्मा में वेदोपदेश करने में यह हेतु है कि उनके (अग्गि, वायु, आदित्य और अंगिरा के) सदृश व अधिक पुण्यात्मा जीव कोई भी नहीं थे। इसलिए परमेश्वर में पक्षपात कुछ भी नहीं आ सकता। लेख के सीमा से अधिक बढ़ जाने के कारण शेष प्रश्नों को हम यहां प्रस्तुत नहीं कर पा रहे हैं। यदि पाठक अन्य प्रश्नों व उनके उत्तर देखना चाहें तो वह महर्षि दयानन्द के पं. लेखराम जी तथा मास्टर लक्ष्मण जी आर्योपेदेशक लिखित जीवन चरितों में देख सकते हैं।

**समलैगिंकता का विरोध**

महर्षि दयानन्द सार्वजनिक रूप से समलैंगिकता रूपी व्यभिचार का विरोध करने वाले पहले महापुरूष थे। इस विषयक उनके विचार भी पाठकों के ज्ञानार्थ प्रस्तुत हैं। फर्रूखाबाद में 6 अक्तूबर 1879 को लाला जगन्नारथ जी सेठ के निवास पर महर्षि दयानन्द जी का एक व्याख्यान हुआ। मैजिस्टेट श्री स्काट महोदय तथा कई अंग्रेज व भारतीय पादरी भी आये थे। मैजिस्ट्रेट महोदय कुर्सी पर नहीं बैठते थे। स्वामी जी ने बहुत अनुरोधपूर्वक कह-सुनकर कुर्सी पर बिठाया। जाईंट महोदय का एक पैर नहीं था। स्वामी जी ने कहा--आपको बड़ा कष्ट है। वह बोले--मुझे आपका उपदेश सुनने की बड़ी उत्सुकता है। स्वामी जी ने आज वेश्यागमन तथा समलैगिंकता करने वालों की आज बहुत पोल खोली और कहा कि मैं किसी का नाम नहीं लेता। जो व्यक्ति ऐसा करता है वह आज से ऐसा करना छोड़ दे। इस पर स्कूल के प्रधानाध्यापक तथा कई व्यक्ति उठकर चले गये। इस विवरण से यह ज्ञात होता है कि स्वामी जी समाज में उच्च आदर्शों के समर्थक थे। सामाजिक दोषों पर उनका पूरा ध्यान था और यथावसर वह उन सभी खण्डन किया करते थे। स्वामी जी ने समाज व जाति सुधार के जो कार्य किए इसका कारण उनका मनुष्यता से गहरा प्रेम था। वह सबको सुखी बनाने के साथ सबका परलोक सुधारना चाहते थे। उस महर्षि दयानन्द के ऋण से सारी मानवता एवं मुख्यतः भारत के वैदिक व सनातन धर्मी लोग कभी मुक्त नहीं हो सकते।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**